



2026:AHC:57600

ए.एफ.आर.

सुरक्षित: 13.03.2026

निणीत: 20.03.2026

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

अनुच्छेद 227 के अंतर्गत मामले संख्या - 13103/2025

पारस उर्फ राम पारसयाची(गण)

बनाम

राम चरित्र और एक अन्यप्रत्यर्थी(गण)

याची(गण) के अधिवक्ता : अमित कुमार पांडेय, काली चरण यादव

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता :

न्यायालय संख्या - 5

माननीय न्यायमूर्ति मनीष माथुर,

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता को मुना और रिकॉर्ड का अवलोकन किया।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि वादी-प्रतिवादियों द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में राम आसरे द्वारा निष्पादित वसीयत दिनांक 21.05.1988 को रद्द करने के लिए मूल वाद संख्या 859/2006 दाखिल किया गया था। प्रतिवादी द्वारा लिखित बयान दर्ज करते हुए मुकदमा लड़ा गया था। दलीलों के आधार पर, ट्रायल कोर्ट द्वारा दिनांक 01.12.2008 को विवादक तय किए गए थे। कुल आठ विवादक तय किये गये थे। विवादक संख्या 3 परिसीमन से संबंधित है "क्या वाद काल बाधित है" और विवादक संख्या 6 इस आशय का है कि क्या विचाराधीन मुकदमा उ.प्र. जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम की धारा 331 द्वारा वर्जित है। इसके बाद, वादी का साक्ष्य दर्ज किया गया तथा दिनांक 02.07.2025 को प्रतिवादी द्वारा विवादक संख्या 3 व 6 को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय करने के लिए एक आवेदन दायर किया गया।

3. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि ट्रायल कोर्ट यानी सिविल जज (जूनियर डिवीजन), बस्ती को मुकदमे में तय किए गए विवादक संख्या 3 एवं 6 यानी मूल वाद संख्या 859 वर्ष 2006, राम चरित्र बनाम पारस @ राम पारस व अन्य के मुकदमे के साथ आगे बढ़ने से पहले प्रारंभिक विवादक के रूप में तय किए जाने का निर्देश दिया जाना चाहिए। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी तर्क दिया गया है कि उसने ट्रायल कोर्ट के समक्ष दिनांक 02.07.2025 को उक्त राहत के

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



लिए पहले ही एक आवेदन दायर कर दिया है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने सि.प्र.सं. के आदेश 14 नियम 2 के प्रावधानों का हवाला दिया और प्रस्तुत किया कि चूंकि विवादक संख्या 3 एवं 6 सिविल कोर्ट की परिसीमा तथा अधिकारिता से संबंधित हैं, इसलिए उन्हें ट्रायल कोर्ट द्वारा प्रारंभिक विवादक के रूप में तय किया जाना चाहिए। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 02.07.2025 को दिए गए आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि सि.प्र.सं. के आदेश 14 नियम 2 के मददेनजर, निचली अदालत के लिए अधिकारिता से संबंधित विवादक की सुनवाई करना अनिवार्य है या किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद पर वर्जन को पहले प्रारंभिक विवादक के रूप में तय किया जाना चाहिए और उसके बाद मामले को आगे बढ़ाना चाहिए।

4. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई दलीलों पर विचार करने से पूर्व, उस प्रावधान पर गौर करना उचित होगा जो शुरू में मौजूद था, यानी 1976 के संशोधन से पहले और उसके बाद। सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने से पूर्व आदेश 14 का नियम 2, निम्नानुसार पढ़ा गया:-

"आदेश 14, नियम 2 -- विधि और तथ्य विवादक - जहां विधि विवादक और तथ्य विवादक दोनों एक ही वाद में पैदा हुए हैं और न्यायालय की एक राय है कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल विधि विवादक के आधार पर किया जा सकता है, तो वह पहले उस विवादक का विचारण करेगा और उस प्रयोजन के लिए यदि वह ठीक समझे तो, वह अन्य विवादकों का निपटारा तब तक के लिए मुलतवी करेगा जब तक कि उस विवादक का अवधारण न कर दिया गया हो।"

5. सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा नियम 2 में संशोधन के बाद, निम्नलिखित नियम को निम्नानुसार प्रतिस्थापित किया गया है:-

"2. न्यायालय द्वारा सभी विवादकों का निर्णय सुनाया जाना - (1) इस बात के होते हुए भी कि वाद का निपटारा प्रारंभिक विवादक पर किया जा सकेगा, न्यायालय उपनियम (2) के उपबन्धों के अधीन रहते हुए सभी विवादकों पर निर्णय सुनाएगा।

(2) जहां विधि विवादक और तथ्य विवादक दोनों एक ही वाद में पैदा हुए हैं और न्यायालय की एक राय है कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल विधि विवादक के आधार पर किया जा सकता है वहां यदि वह विवादक-

(क) न्यायालय की अधिकारिता, अथवा

(ख) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन,

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



से सम्बन्धित है तो वह पहले उस विवादक का विचारण करेगा और उस प्रयोजन के लिए यदि वह ठीक समझे तो, वह अन्य विवादकों का निपटारा तब तक के लिए मुलतवी कर सकेगा जब तक कि उस विवादक का अवधारण न कर दिया गया हो और उस वाद की कार्यवाही उस विवादक के विनिश्चय के अनुसार कर सकेगा।”

6. सि.प्र.सं. के आदेश 14 का असंशोधित नियम 2 को अनिवार्य माना गया था, इसलिए न्यायालय के लिए यह अनिवार्य था कि वह विधि विवादकों को प्रारंभिक विवादकों के रूप में माने और अन्य विवादकों को स्थगित करके उन पर निर्णय करे। सि.प्र.सं. के आदेश 14 नियम 2 की भाषा सुस्पष्ट एवं सुव्यक्त थी।

7. संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा विधिक स्थिति बदल दी गई। नियम 2 का उप-नियम (1) गैर-अप्रत्याशित खंड से शुरू होता है और कहता है कि इस बात के बावजूद कि मामले को प्रारंभिक विवादक पर निपटाया जा सकता है, न्यायालय [उप-नियम (2) के प्रावधानों के अधीन] सभी विवादकों पर निर्णय सुनाएगी।

8. सुन्नी सेंट्रल वक्फ बोर्ड व अन्य बनाम गोपाल सिंह विशारद व अन्य; एआईआर 1991 इलाहाबाद 89 के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ ने निर्णय के पैराग्राफ संख्या 11 और 12 में निम्नानुसार व्यवस्था दी है:-

“11. पुराने आदेश 14 नियम 2 में प्रयुक्त शब्द “करेगा” को वर्तमान नियम में “कर सकेगा” शब्द से बदल दिया गया है। इस प्रकार अब यह न्यायालय के विवेकाधीन है कि वह विधि विवादक को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय करे या इसे अन्य विवादकों के साथ तय करे। अब न्यायालय के लिए विधि विवादक को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय करना अनिवार्य नहीं है।

12. संशोधित प्रावधान द्वारा लाया गया एक और बदलाव यह है कि विधि के सभी विवादकों को प्रारंभिक विवादकों के रूप में तय नहीं किया जा सकता है। केवल विधि के उन विवादकों को प्रारंभिक विवादकों के रूप में तय किया जा सकता है जो आदेश 14 के नियम 2 के उप-नियम (2) खंड (क) और (ख) के दायरे में आते हैं।

खंड (क) “न्यायालय की अधिकारिता” का उल्लेख करता है और खंड (ख) “तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन” के बारे में बताता है।....”

9. मिथलेश कुमारी व अन्य बनाम ग्राम सभा, किशनपुर व अन्य; 1999 एआईआर इलाहाबाद 304 के मामले में इस न्यायालय ने पैराग्राफ संख्या 8, 9 और 10 में निम्नानुसार व्यवस्था दी है:-

अस्वीकरण

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



"8. उप-नियम (2) न्यायालय के विवेकाधिकार पर छोड़ता है। अधिकारिता का प्रश्न या वाद की पोषणीयता से संबंधित अन्य विवाद्यों का विनिश्चय करना न्यायालय के लिए अनिवार्य नहीं है। नियम 2 का उप-नियम (1) न्यायालय को आदेश देता है कि भले ही किसी मामले का निपटारा प्रारंभिक विवाद्यक पर किया गया हो, न्यायालय उप-नियम (2) के प्रावधानों के अधीन सभी मुद्दों पर निर्णय सुनाएगा।

9. विधायिका की मंशा यह है कि वाद को लम्बा खींचने के बजाय पहले एक प्रारंभिक विवाद्यक पर निर्णय करके और उसके बाद अन्य विवाद्यों पर निर्णय करके जहाँ तक संभव हो टाला जाए। यदि सभी विवाद्यों पर निर्णय ले लिया जाता है, तो प्रारंभिक विवाद्यक पर निर्णय लेने के संबंध में कार्यवाहियों की अनावश्यक बहुलता से बचा जा सकता है। यह न्यायालय के ऊपर है, हालाँकि, कुछ परिस्थितियों में यदि यह जाहिर तौर पर स्पष्ट है कि वाद सुनवाई योग्य नहीं है या अधिकारिता द्वारा वर्जित है, तो ऐसे विवाद्यक का निपटारा करने के लिए, ऐसे विवाद्यों को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में तय कर सकता है।

10. श्रीमती फातिमा बीबी बनाम राजस्व परिषद, इलाहाबाद व अन्य 1981 एएलजे 812, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि ट्रायल कोर्ट ने निर्णय के समय धारा 49 अधिनियम के तहत वादों के वर्जन के प्रश्न पर विचार करने का निर्णय लिया था न कि प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में, तो यह नहीं कहा जा सकता कि न्यायालय ने प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में इस विवाद्यक पर निर्णय न लेकर स्पष्ट रूप से त्रुटि की है, क्योंकि यह न्यायालय के विवेक के अंतर्गत था कि वह अधिकारिता के विवाद्यक या वाद की पोषणीयता के वर्जन के विवाद्यक को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में तय करे। न्यायालय ने बताया कि सि.प्र.सं. के आदेश 14 का उप-नियम (1) "करेगा" शब्द का उपयोग किया गया है जबकि उप-नियम (2) में "कर सकेगा" शब्द का उपयोग किया गया है जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि किसी भी विवाद्यक को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में तय करना न्यायालय का विवेक है।"

10. सिद्ध नाथ व अन्य बनाम जिला न्यायाधीश, मिर्जापुर व अन्य; एआईआर 2002 इलाहाबाद 356, के मामले में इस न्यायालय ने पैराग्राफ संख्या 9 और 11 में निम्नानुसार व्यवस्था दी है: -

"9. आदेश 14 के नियम 2 के उप-नियम (2) के अवलोकन से पता चलता है कि विधि विवाद्यक को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में तय किया जा सकता है बशर्ते वह न्यायालय की अधिकारिता से संबंधित हो या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन से संबंधित हो। हालाँकि, उक्त प्रावधान न्यायालय को यह विवेक देता है कि वह किसी विवाद्यक को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में तय करे या नहीं। न्यायालय किसी भी विवाद्यक को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में तय करने के लिए बाध्य नहीं है। यह उक्त प्रावधान में आने वाले शब्दों "यह तय कर सकता है" से स्पष्ट है।

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



11. इस प्रकार, भले ही विवादक न्यायालय की अधिकारिता से संबंधित हो या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन से संबंधित हो, फिर भी न्यायालय के पास आदेश 14 नियम 2(2) के तहत विवेकाधिकार है कि वह इसे प्रारंभिक विवादक के रूप में तय कर सकता है या नहीं।"

11. संशोधित नियम को उप-नियम (1) और (2) में विभाजित किया गया है, पहले में असंशोधित नियम के तहत भी सर्वमान्य सामान्य नियम शामिल किया गया है कि एक वाद में उत्पन्न होने वाले सभी विवादकों पर आम तौर पर एक साथ विचारण किया जाना चाहिए, भले ही विवादक को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय किया जा सकता है और दूसरे में सामान्य नियम के लिए एक सीमित अपवाद प्रदान किया गया है। उप-नियम (2) इसके अलावा विवेकाधीन है और अनिवार्य नहीं है, यह राय बनाने के संबंध में कि वाद या उसके एक भाग का निपटारा प्रारंभिक विवादक के आधार पर तय किया जा सकता है और पहले प्रारंभिक विवादक के रूप में उसके विचारण के संबंध में भी है।

12. ताराकांत बनाम पुडोमनी; (1866) 10 एमआईए 476 में प्रिवी काउंसिल की न्यायिक समिति सभी विवादकों पर निर्णय लेने के पक्षधर थी। लॉर्ड टर्नर ने कहा था:-

"निचली अदालतें, अपील योग्य मामलों में, जुड़े हुए सभी विवादकों पर निर्णय लेने से वर्जित करके कभी-कभी इस समिति को यह सिफारिश करने के लिए बाध्य नहीं करती हैं कि किसी कारण से टाल दिया जाए, अन्यथा अपील पर अंततः निर्णय लिया जा सकता है। यह निश्चित रूप से वादी पक्ष के लिए एक गंभीर कमी है, क्योंकि इसमें द्वितीय अपील के साथ-साथ नीचे दी गई एक अन्य सुनवाई का खर्च भी शामिल हो सकता है। इसलिए, यह वांछनीय है कि अपील योग्य मामलों में निचली अदालतों को, जहां तक संभव हो, सभी महत्वपूर्ण बिंदुओं पर अपनी राय देनी चाहिए।"

13. हरद्वारी लाल बनाम पोंकर मल; एआईआर 1978 पंजाब और हरियाणा 230 के मामले में, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने आदेश 14 के नियम 2 के संशोधित और असंशोधित प्रावधान पर विचार किया और कहा:

"उक्त प्रावधान का तुलनात्मक अध्ययन, क्योंकि यह संशोधन से पहले विद्यमान था और संशोधन के बाद यह स्पष्ट रूप से संकेत देगा कि किसी विवादक पर विचार करना और प्रारंभिक विवादक के रूप में इसका निपटारा अब केवल सीमित मामलों में ही स्वीकार्य किया गया है। असंशोधित संहिता में, वर्गीकरण केवल विधि विवादकों और तथ्य विवादकों के बीच था और न्यायालय के लिए यह अनिवार्य था कि वह पहले विधि विवादकों पर विचारण करेगा और वह अन्य विवादकों का निपटारा तब तक के लिए मुलतवी करेगा जब तक कि उस विवादक का अवधारण न कर दिया गया हो। दूसरी ओर, संशोधित प्रावधान में न्यायालय के लिए अनिवार्य किया गया है कि किसी मामले को प्रारंभिक विवादक पर तय किया जा सकता है, इसके बावजूद न्यायालय को सभी विवादकों पर निर्णय सुनाना होगा। इसका एकमात्र अपवाद उप-नियम (2) में निहित है। यह उप-नियम न्यायालय को

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



विवेकाधिकार प्रदान करके एक सीमित परिसीमा तक आदेश को शिथिल करता है कि यदि उसकी राय है कि मामले या उसके किसी भाग को केवल विधि विवादक पर तय किया जा सकता है, तो वह पहले उस विवादक पर विचारण कर सकता है इस प्रकार विचारण किये जाने वाला विवादक न्यायालय की अधिकारिता या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन से संबंधित होना चाहिए।”

14. इस प्रकार, यह न्यायालय का विवेकाधिकार है कि वह न्यायालय की अधिकारिता या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन से संबंधित विवादक पर निर्णय करे।

15. यह निर्णय लेने में कि न्यायालय की अधिकारिता या वाद के वर्जन के विवादक पर प्रारंभिक विवादक के रूप में विचारण करने की प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिए या अस्वीकार करनी चाहिए, दो परस्पर विरोधी विचारों के बीच सामंजस्य रखकर देखा जाना चाहिए, अर्थात्, (i) मामलों को टुकड़ों में विचारण करना अवांछनीय है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप लंबी मुकदमेबाजी होगी, और (ii) नियम 2 का विशिष्ट और संपूर्ण प्रावधान जो अपने प्रतिवादी को लम्बी मुकदमेबाजी में घसीटने के लिए मजबूर करके अन्याय को रोकने की दृष्टि से अधिनियमित किया गया है, जब मामले या उसके महत्वपूर्ण भाग को तथ्यों की जांच किए बिना विधि के बिंदु पर तय जा सकता है।

16. तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन के विवादक को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय किया जा सकता है यदि न्यायालय की राय है कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल ऐसे विवादक के आधार पर किया जा सकता है। प्रश्न, विधि विवादक क्या है, संहिता परिभाषित नहीं करती है। आम तौर पर, यदि किसी विवादक का उत्तर विधि के किसी सिद्धांत के आधार पर निर्धारित किया जा सकता है, तो उस विवादक को विधि विवादक कहा जा सकता है। यदि पक्षों को ऐसे विवादक पर साक्ष्य पेश करने की आवश्यकता होती है, तो यह विधि विवादक नहीं रह जाता है।

17. रमेश डी. देसाई व अन्य बनाम बिपिन वाडीलाल मेहता व अन्य; (2006) 5 एससीसी 638, में परिसीमा के मुद्दे से निपटते समय न्यायालय ने राय दी कि: (एससीसी पृष्ठ 652 पैरा 19)

“19. परिसीमा की याचिका को तथ्यों से अलग विधि के एक अमूर्त सिद्धांत के रूप में तय नहीं किया जा सकता है क्योंकि हर मामले में परिसीमा के शुरुआती बिंदु को सुनिश्चित करना होता है जो पूरी तरह से तथ्य का प्रश्न है।” न्यायालय ने आगे कहा कि परिसीमा की याचिका तथ्य एवं विधि का एक मिश्रित प्रश्न है। आदेश 14 के उप-नियम (2) में प्रयुक्त भाषा पर स्पष्ट रूप से विचार करने पर यह निश्चितता के साथ कहा जा सकता है कि जब किसी विवादक पर तथ्यों की जांच किए जाने की आवश्यकता होती है तो इसे प्रारंभिक विवादक के रूप में नहीं तय किया जा सकता है। उक्त निर्णय में न्यायालय ने इस प्रकार राय दी:-

अस्वीकरण

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



"13. सीपीसी के आदेश 14 नियम 2 के उप-नियम (2) में कहा गया है कि जहां विधि और तथ्य दोनों के विवादक एक ही वाद में उठते हैं, और न्यायालय की राय है कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल विधि विवादक के आधार पर किया जा सकता है, तो वह उस विवादक पर पहले विचारण कर सकती है यदि वह विवादक (क) न्यायालय की अधिकारिता, अथवा (ख) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा सृष्ट वाद के वर्जन से संबंधित है। इस नियम के प्रावधान विचार हेतु पहले मेजर एस.एस. खन्ना बनाम ब्रिगेडियर एफ.जे. डिलन; एआईआर 1964 एससी 497 में इस न्यायालय के समक्ष आए थे और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था: (एससीआर पृष्ठ 421)

"18...सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 14 नियम 2 के तहत, जहां विधि और तथ्य दोनों विवादक एक ही वाद में उठते हैं, और न्यायालय की राय है कि मामले या उसके किसी भाग का निपटारा केवल विधि विवादकों के आधार पर किया जा सकता है, वह पहले उन विवादकों पर विचारण करेगा, और उस उद्देश्य के लिए, यदि वह उचित समझती है, तो विधि विवादकों का निर्धारण होने तक तथ्य विवादकों के निपटारे को स्थगित कर सकती है। तथ्य विवादकों के अलावा विधि विवादकों पर विचारण करने की अधिकारिता का प्रयोग केवल तभी किया जा सकता है, जहां न्यायालय की राय में सम्पूर्ण वाद का निपटारा केवल विधि विवादकों के आधार पर किया जा सकता है, लेकिन संहिता न्यायालय को प्रारंभिक विवादकों के रूप में विधि और तथ्य के मिश्रित विवादकों पर विचारण करने के लिए कोई अधिकारिता नहीं देती है। आम तौर पर किसी वाद में सभी विवादकों पर न्यायालय द्वारा विचारण किया जाना चाहिए; ऐसा न करने पर, खासकर जब विधि विवादकों पर निर्णय तथ्य विवादकों के निर्णय पर निर्भर करता है, तो वाद का विचारण एकतरफा हो जाएगा।"

18. यद्यपि संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा सीपीसी के आदेश 14 नियम 2 की भाषा में थोड़ा संशोधन किया गया है लेकिन उपरोक्त उद्धृत निर्णय में प्रतिपादित सिद्धांत अभी भी लागू है और इस सिद्धांत से कोई विचलन नहीं हो सकता है कि संहिता न्यायालय को विधि और तथ्य के मिश्रित विवादकों पर प्रारंभिक विवादक के रूप में विचारण करने की कोई अधिकारिता प्रदान नहीं करती है और जहां विधि विवादक पर निर्णय तथ्य विवादक के निर्णय पर निर्भर करता है वहां इसका निपटारा प्रारंभिक विवादक के रूप में नहीं किया जा सकता है।

19. सती परदेसी समाधि व पिल्लयार मंदिर बनाम एम. संकुंतला (मृत) एल.आर. के माध्यम से व अन्य; (2015) 5 एससीसी 674 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी यही दृष्टिकोण दोहराया गया है।

20. वाद की पोषणीयता के संबंध में दलील को पहली बार दलील (लिखित बयान) में उठाया जाना आवश्यक है, तभी ऐसी याचिका को सीपीसी के आदेश 14 नियम 2 तहत प्रारंभिक विवादक के रूप में इसकी योग्यता के आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा तय किया जा सकता है।

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



21. मैसर्स डुल्लर एंटरप्राइजेज प्राइवेट लिमिटेड बनाम भगवान व एक अन्य; एआईआर 2001 राजस्थान पृष्ठ 44 के मामले में जहां प्रतिवादी ने वादी के साक्ष्य के निष्कर्ष के बाद न्यायालय की अधिकारिता से संबंधित प्रारंभिक विवादक को उठाने के लिए एक आवेदन दायर किया, राजस्थान उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि आवेदन को प्रामाणिक नहीं कहा जा सकता क्योंकि वाद के लंबित रहने के 10 वर्षों में प्रतिवादी ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है।

22. वर्तमान मामले में, वाद 2006 का है, विवादक दिसंबर, 2008 में तय किए गए थे और इस अवधि के दौरान वादी के साक्ष्य भी आंशिक रूप से दर्ज किए गए हैं। जुलाई, 2025 में ही प्रतिवादी द्वारा विवादक संख्या 3 और 6 को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय करने के लिए आवेदन दायर किया गया था। मेरे विचार में, याचिकाकर्ता द्वारा दायर आवेदन को एक प्रामाणिक आवेदन नहीं कहा जा सकता क्योंकि उसने लगभग 18 वर्षों तक विवादक संख्या 3 और 6 को प्रारंभिक विवादक के रूप में तय करने के लिए राहत पर दबाव नहीं डालने का विकल्प चुना है।

23. मेरी सुविचारित राय में, विवादकों को तय करने की तिथि से 18 वर्ष की समाप्ति के बाद प्रतिवादी-याचिकाकर्ता द्वारा दायर किए गए आवेदन पर प्रारंभिक विवादकों के रूप में उन विवादकों पर निर्णय लेने के लिए निचली अदालत को निर्देश देने का कोई फायदा नहीं होगा, खासकर जब लगभग वादी के साक्ष्य दर्ज हो गए हों, बल्कि यह उचित होगा कि निचली अदालत को सभी पक्षों के साक्ष्यों पर विचार करने के बाद वाद के निर्णय के समय सभी विवादकों पर एक साथ विचार करना चाहिए और निर्णय लेना चाहिए।

24. वर्तमान मामले में, वाद 2006 से लंबित है, इसलिए, यह वांछनीय होगा कि निचली अदालत सभी संबंधित पक्षों को सुनने और उनके मामले के सम्बन्ध में साक्ष्य प्रस्तुत करने का उचित अवसर देने के बाद, इस आदेश की प्रामाणिक प्रति प्रस्तुत करने की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर, विधि अनुसार, त्वरित, अधिमान्तः मूल वाद संख्या 859 / 2006 पर निर्णय लेने का हर संभव प्रयास करेगी, बशर्ते कि कोई अन्य विधिक बाधा न हो।

25. तदनुसार, याचिका का निस्तारण किया जाता है।

(न्यायमूर्ति मनीष कुमार निगम,)

20 मार्च, 2026

नीतिका श्री.

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"